एक बार फिर सुदर्शन

चेन्नई में आर.एस.एस. संबंधित विचारों वाले नीति अध्ययन केन्द्र द्वारा प्रकाशित ''भारत की धार्मिक जनसांख्यिकी'' के लोकार्पण के अवसर पर बोलते हुए आर.एन.एस. सरसंघचालक के.एस. सुदर्शन में हिन्दुओं को बड़ा परिवार रखने के लिए उत्साहित किया (तीन से कम नहीं आप जितना ज्यादा कर सकें उतना अच्छा) यह मुसलमानों और इसाईयों की उस जनसंख्या वृद्धि दर के आक्रामक निदान का तात्कालिक जवाब है जिसे वो निश्चित रूप से एक गंभीर राष्ट्रीय समस्या मानते हैं। यह सर्वविदित है कि स्वतंत्र भारत में मुसलमानों की वृद्धि दर हिन्दुओं से अधिक रही है। यह स्थिति 1951 से है। 1951–61 के दशक में मुसलमानों की वृद्धि दर 24.9 प्रतिशत थी जबकि हिन्दुओं की वृद्धि दर 18.6 प्रतिशत थी। 1981 और 1991 की जनगणना में असम तथा जम्मू और काश्मीर के नहीं जोड़े गए जनसंख्या आंकड़ों को मिलाने के बाद 1991–2001 में मुसलमानों की वृद्धि दर 29.3 प्रतिशत थी जबकि हिन्दुओं की वृद्धि दर 20.0 प्रतिशत थी।

इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि भाजपा और इसके समान विचारों वाले सहयोगियों ने मुस्लिमों के हिन्दुओं पर हावी हो जाने के भय को भड़काने की कोशिश की है। यह सचमुच ही एक बेतुका मत है क्योंकि वर्तमान सिथतियों को छोड़ दे तो, सभी वर्गों की जनसंख्या वृद्धि इस शताब्दी के अंत तक बंद हो जाएगी। गणना के अनुसार अगर वर्तमान प्रवृत्तियाँ जारी भी रहीं तो मुसलमानों को जनसंख्या के संदर्भ में हिन्दुओं की बराबरी करने में 247 साल लग जाऐंगे। ऐसा नहीं है कि आर.एस.एस. की गणित खराब है, लेकिन उनके लिए तर्क मुद्दा नहीं है।

अधिकांश जनसांख्यिकीविदों का अनुमान है कि 2060 तक भारत की जनसंख्या वृद्धि रूक जाएगी। लेकिन निसारु प्रदेश (बिहार, मध्य प्रदेश, राजस्थान और उत्तर प्रदेश) की जनसंख्या 2091 तक जारी रहेगी। तबतक मुस्लिम जनसंख्या वृद्धि भी रुक

जाएगी और उस समय भारत की मुस्लिम जनसंख्या 18.8 प्रतिशत होगी। लेकिन अधिक चिन्ता का विषय शताब्दी के अंत तक .... जनसंख्या वृद्ध की प्रवृत्ति का जारी रहना है, जिससे अन्य क्षेत्रों की आनुपातिक जनसंख्या वास्तव में संकुचित हो जाएगी। इसका राजनीतिक परिणाम मुसलमानों की वृद्धि से अधिक गंभीर हो सकता है लेकिन केवल मुसलमानों की जननशक्ति से ब्याकुल संघ परिवार को इससे मतलब नहीं है।

उदारीकरण के एक दशक के बाद भी भारत में अधिक परिवर्तन नहीं हुआ है। हमारी एक अरब से भी अधिक जनसंख्या का एक तिहाई हिस्सा गरीबी रेखा के नीचे जीवन–यापन करता हे। और भारतीय गरीबी रेखा पर ध्यान दें, क्योंकि इसका प्रतिदिन के कैलोरी ग्रहण का पैमाना, वास्तव में भूख रेखा है, न कि वह गरीबी रेखा जिसके अंतर्गत मानव की मूलभूत जरूरतें आती हैं। भारत की जी.डी.पी. 1950–51 के 9547 करोड़ से बढ़कर 2003–04 में 2760025 करोड़ हो गयी। इस जनसाधारण विकास में कृषि की भागीदारी 55.8 प्रतिशत से घटकर 27.3 प्रतिशत हो गयी, जबकि उद्योग की भागीदारी 15.2 प्रतिशत से बढ़कर 24.6 प्रतिशत हो गयी और सेवा क्षेत्र की भागीदारी 23.0 प्रतिशत से बढ़कर 48.2 प्रतिशत हो गयी जो यह दर्शाती है कि भारत वास्तव में बिना औद्योगीकृत हुए एक उत्तर औद्योगिक समाज के रूप में बदल रहा है।

हमें इस बात का अनुभव है कि पुनर्वितरण नीतियाँ कार्यरूप से उतनी प्रभावी नहीं होती है। ''गरीबी हटाओ'' की हमारी आर्थिक नीतियों के एक नारा बन जाने के लगभग 25 साल के बाद भी 1994 में, आय असमानता मापने वाला मिनी गुणांक 1971 के 0.345 के लगभग बराबर रहा। 2003 में यह और बिगड़कर 0.378 हो गया। शहरी और ग्रामीण असमानता भी पहले से बढ़ी है। सबसे बुरा यह है कि क्षेत्रों के बीच बदतर असमानता खतरे की घंटी बजा रही है। भारत में अब स्पष्ट विभाजन बिल्कुल साफ दिखता हे जहां हिन्दी भाषी और पूर्वी क्षेत्र बहुत पीछे हैं।

चार दक्षिणी राज्यों की जनसंख्या वृद्धि दर बिमारू राज्यों की वृद्धि दर के आधे से भी कम है। यह सच है कि, पंजाब, हरियाणा, गुजरात और महाराष्ट्र की जनसंख्या

वृद्धि दर चार बिमारू राज्यों के बराबर है लेकिन उनकी प्रतिव्यक्ति आय में वृद्धि उन चार दक्षिणी राज्यों के समान है। इस निष्कर्ष पर खुश होने की जरूरत नहीं है कि अगर जनसंख्या वृद्धि को कम कर लिया गया होता तो उनकी प्रतिव्यक्ति आय में वृद्धि बहुत शानदार होती । ऊपर से ऐसा लग सकता है लेकिन वास्तव में यह उस तरह प्रभावी नहीं होता।

वृहत्–स्तर पर भारत और चीन दोनों देशों में जनसंख्या का आर्थिक विकास के साथ आश्चर्यजनक विस्तार हुआ है। यह बिल्कुल साफ है कि जनसंख्या वृद्धि ही अनिवार्य रूप से आर्थिक वृद्धि में रुकावट नहीं होती। जबकि, इसके बहुत से प्रमाण हैं कि आर्थिक वृद्धि में जनसंख्या वृद्धि का बहुत योगदान रहा है। यहां महत्वपूर्ण कारक निर्भरता अनुपात है, जो 15–64 आयुवर्ग के उत्पादक जनसंख्या पर आश्रित 0–14 आयुवर्ग और 65 से अधिक आयु वाले लोगों का अनुपात है। यह कहने की जरूरत नहीं है कि निर्भरता अनुपात जितना कम रहे उतना बेहतर है। वर्तमान में चीन 450 प्रति 1000 के निर्भरता अनुपात के साथ अनुकूल स्थिति में है जबकि यह भारत में लगभग 650 प्रति 1000 है। लगभग 2020 ई. तक भारत का निर्भरता अनुपात एशिया के न्यूनतम हो जाएगा, जिससे इसे वास्तव में पहली बार आज के विकसित देशों से अच्छा करने का जनसांख्यिकी अवसर मिलेगा।

2020 में भारत की 27 करोड़ से अधिक जनसंख्या 15–35 आयु वर्ग में होगी जिससे उत्पादकता और आर्थिक योगदान उच्चतम होगा। अगर 2020 तक बचत दर बनी रहे और उत्पादक क्षमता उच्चतम हो तो हमारे पास 2050 तक इसे एक विकसित और उन्नत अर्थव्यवस्था बनाने का एक बड़ा अवसर रहेगा बशर्ते हम अधिकांश जनसंख्या को शिक्षित ओर कार्यक्षम बनाने में सफल हो जाएँ। ऐसा जनसांख्यिकीय समूह फिर कभी नहीं होगा। यह बहुत दुःखद है कि हमारे नेता राष्ट्र की बजाय अपने निजी गुटों से संचालित हो रहे हैं।

लेकिन आर.एस.एस. के सारे मुद्दे निराधार नहीं हैं। अगर आर्थिक स्थितियाँ जनसंख्या वृद्धि को निर्धारित करती है तो हमें अवश्य सोचना चाहिए कि एस.सी. और एस.टी. वर्ग की वृद्धि दर मुस्लिम वृद्धि दर से नीचे क्यों है? जैसा कि 1991–2001 के बीच मुस्लिम दशकीय वृद्धि दर 29.3 प्रतिशत की तुलना में एस.सी. और एस.टी. की दशकीय वृद्धि दर क्रमशः 20.55 प्रतिशत और 24.45 प्रतिशत थी। एस.सी. और एस.टी. वर्ग की घरेलू वार्षिक आय और प्रति व्यक्ति आय दोनों ही मुस्लिम की घरेलू वार्षिक आय और प्रति व्यक्ति आय से कम है। दूसरी ओर मुस्लिम हिन्दू जाति की तुलना में अधिक गरीब हैं। स्पष्ट रूप से, जनसंख्या वृद्धि पर वर्गीय स्थिति का प्रभाव है। शहरी और ग्रामीण दोनों क्षेत्रों में मुस्लिमों का साक्षरता स्तर बहुत ज्यादा तो नहीं लेकिन हिन्दुओं से कम है। शायद अधिक महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि प्रतिशतन 18 प्रतिशत अशिक्षित मुस्लिम औरतों की तुलना में इनके दुगने से भी अधिक 44 प्रतिशत हिन्दू औरतें रोजगार वाली हैं।

अंततः, कुछ चीजें हैं जो संघ परिवार को सचमुच चिन्तित करेगी। 1961 से हिन्दू जाति का अनुपात लगातार घट रहा है, तब यह 61.97 प्रतिशत था। अब यह 56. 05 प्रतिशत है।

Mohan Guruswamy
Email : mguru@sify.com
December 3, 2005